

पृथ्वी राज एवं अन्य

बनाम

कमलेश कुमार एवं अन्य

20 सितंबर 2004

[न्यायमूर्ति अरिजीत पसायत एवं न्यायमूर्ति सी. के. ठक्कर]

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958: धारा 11 (2)

अपील और पुनरीक्षण — वरीयता का अधिकार — धारित — अपील करने का अधिकार केवल दोषी व्यक्ति या राज्य तक ही सीमित नहीं है — शिकायतकर्ता भी धारा 3 या 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर सवाल उठाते हुये अपील कर सकता है।

अपील और पुनरीक्षण — हस्तक्षेप — अपीलीय न्यायालय की शक्तियों का दायरा और सीमा — धारित — केवल धारा 3 या 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर अपीलीय न्यायालय द्वारा निपटारा किया जा सकता है। - अपराध की प्रकृति को बदलने या यह निर्देश देने की अभियुक्त को किसी अन्य अपराध के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिये, कोइ गुंजाइश नहीं रहती।

अपीलकर्ताओ को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 148,307,323,324 और 326 सपठित धारा 149 के लिये अभियोजित किया गया था। विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को भातीय दण्ड संहिता की धारा 148, 323, 324 सपठित धारा 149 के अपराधों के लिए दोषसिद्ध ठहराया गया हालांकि सजा सुनाते समय विचरण न्यायालय

द्वारा अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3/4 के तहत लाभो को बढा दिया गया और यह अभिनिर्धारित किया गया की अपीलार्थी को दो वर्ष के लिए परीवीक्षा पर रहना होगा।

वास्तविक शिकायतकर्ता द्वारा दायर अपील में, परीवीक्षा अधिनियम के तहत दिये गये लाभो पर सवाल उठाने के अलावा, अपराध की प्रकृति के संबंध में निष्कर्षों की शुद्धता पर भी सवाल उठाये गये। उच्च न्यायालय का विचार था कि विचारण न्यायालय का यह अभिनिर्णय उचित नहीं था कि धारा 307 या 326 के तहत कोई अपराध नहीं किया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियुक्त व्यक्ति भारतीय दण्ड संहिता की धारा 326 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिये। ऐसे अपराध में सजा देने के लिए मामला विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया गया। इसलिए यह याचिका दायर की गई।

न्यायालय के समक्ष निम्नलिखित प्रश्न उठे

(क) क्या वास्तविक शिकायतकर्ता अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 11 (2) के तहत अपील कर सकता है ?

(ख) अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 11 (2) के तहत अपील में हस्तक्षेप की गुंजाइश और सीमा क्या है ?

अपील की अनुमति देते हुए न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि -

1. अपराधी परीवीक्षा अधिनियम की धारा 11 (2) उन व्यक्ति के बारे में अप्रतिबंधित है जो अपील कर सकते हैं। इसलिए इस अधिकार को केवल दोषी व्यक्ति या राज्य तक सीमित रखने का कोई औचित्य नहीं है। शिकायतकर्ता भी धारा 11

(2) अपराधी परीवीक्षा अधिनियम के तहत अपील करते हुये धारा 3 या 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर सवाल उठा सकता है।

राजकिशोर जेना बनाम राजा उर्फ कलासी साहु ए.आइ.आर (1971)उडीसा 193
और वैद्यनाथ प्रसाद बनाम अवधेश सिंह ए.आइ.आर (1964) पटना 358 (स्वीकृत)

परमाल घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (1984) सी. आर. एल .जे. 1302,
(खारिज कर दिया)

2. अधिनियम की धारा 11 (4) यह स्थिति स्पष्ट करती है कि अपराधियों के संबंध में धारा 3 या 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर ही अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो, द्वारा निस्तारण किया जा सकता है। अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग करते हुये धारा 3 या 4 के तहत पारित ऐसे आदेश को रद्द कर सकता है और इसके स्थान पर अभियुक्त को सजा दे सकता है। जाहिर है, सजा केवल उस अपराध के संबंध में दी जा सकती है जिससे संबंधित अधिनियम की धारा 3 या धारा 4 के तहत आदेश पारित किया गया है। अपराध की प्रकृति को बदलने और यह निर्देश देने की कोई गुंजाइश नहीं है कि अभियुक्त को एक अन्य अपराध के लिए दोषी ठहराया जाएगा। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्देश देना उचित नहीं था कि अपीलार्थीकर्ताओं की सजा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 326 के तहत होगी। विचारण न्यायालय ने अधिनियम की धारा 4 के तहत आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त कारण दिए थे। ऐसा होने पर, उच्च न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के तहत विचारण न्यायालय द्वारा दिये गये लाभ में हस्तक्षेप करना उचित नहीं था।

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय: आपराधिक अपील सं. 609/1999

राजस्थान उच्च न्यायालय के एस. बी. क्रीमीनल अपील नम्बर 458 /1998 में निर्णय और आदेश दिनांक 1.4.99 से

अपीलार्थियों की ओर से श्री एल. नागेश्वर राव और श्री पुनीत दत्त त्यागी।

उत्तरदाताओं के लिए श्री कुमार कार्तिकेय और श्री अरुणेश्वर गुप्ता।

न्यायालय का निर्णय न्यायामूर्ति अरिजीत पसायत द्वारा दिया गया।

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 11 के इर्द-गिर्द घुमने वाले दो रोचक प्रश्न इस अपील में शामिल हैं। यद्यपि प्रश्न मूलतः विधि के हैं लेकिन तथ्यात्मक पहलू का संदर्भ आवश्यक होगा।

अपीलाकर्ताओं को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आई. पी. सी.')

की धारा 307, 323, 324 और 326 सहपठित धारा 149 के तहत दंडनीय अपराधों के कथित कमिशन के लिए मुकदमें का सामना करना पडा। विद्वान सेशन न्यायाधीश, करौली, राजस्थान ने माना कि यद्यपि 307, 307 सपठित धारा 149 से संबंधित आरोप साबित नहीं हुए लेकिन धारा 324 का अपराध आरोपी-अपीलकर्ता पृथ्वी राज के खिलाफ साबित हुआ जबकि अन्य के विरुद्ध आई. पी. सी. की धारा 324 सपठित धारा 149 का अपराध साबित हुआ। तेजराज के विरुद्ध आइ.पी.सी.की धारा 323 के तहत अपराध साबित हुआ और अन्य के विरुद्ध धारा 323 सपठित धारा 149 का अपराध साबित हुआ। आई. पी. सी. की धारा 148 के तहत भी अपराध साबित हुआ। सजा के प्रश्न पर अभियुक्तगण को सुनने के बाद, यह पाया गया कि अभियुक्तगण में से किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध पूर्व में अपराध में शामिल होने का कोई आरोप नहीं था, घटना पुरानी थी,

दो आरोपी छात्र थे, एक आरोपी व्यक्ति रतन वृद्ध था। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय ने माना कि अभियुक्त व्यक्तियों के जीवन में सुधार के लिए ठोस आधार मौजूद थे। तदनुसार सजा सुनाते समय विचारण न्यायालय ने अधिनियम के तहत लाभों को बढ़ाया और कहा कि उन्हें अच्छा व्यवहार बनाये रखने के लिए दो साल तक परिवीक्षा पर रहना होगा और व्यक्तिगत जमानत देनी होगी। प्रत्येक को समान राशि के 3000 रुपये के जमानत और मुचलके पेश करने हेतु आदेश दिया गया। प्रत्येक को यह भी आदेश दिया गया कि 1500 रुपये प्रतिकर के रूप में जमा करावें। जिसमें से 7500 रुपये मजरूब राधे श्याम को भुगतान करने का आदेश दिया गया।

शिकायतकर्ता द्वारा अधिनियम की धारा 11 (2) के तहत कथित तौर पर एक अपील उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई थी। जिसमें यह तर्क पेश किया गया कि अधिनियम की धारा का 3/4 का गलत तरीके से अभियुक्तगण को लाभ प्रदान किया गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा मुआवजे के भुगतान के लिए निर्देश देने के विरुद्ध भी अपील की गई थी। इसे एस. बी. आपराधिक अपील No.458/98 के रूप में दर्ज किया गया और खारिज कर दिया गया था। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 5, अधिनियम की धारा 4 का लाभ दिए जाने पर मुआवजा देने की अनुमति देती है।

वास्तविक शिकायतकर्ता द्वारा दायर अपील में, अधिनियम के तहत दिये गये लाभों पर सवाल उठाने के अलावा, अपराध की प्रकृति के संबंध में निष्कर्षों की शुद्धता पर भी सवाल उठाये गये थे। उच्च न्यायालय का विचार था कि विचारण न्यायालय का यह अभिनिर्णय उचित नहीं था कि धारा 307 या 326 के तहत कोई अपराध नहीं

बनता है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियुक्त व्यक्तियों को आई. पी. सी. की धारा 326 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिये। ऐसे अपराध के लिए सजा देने के लिए मामले को विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया।

अपील के समर्थन में विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एल. नागेश्वर राव, ने तर्क प्रस्तुत किया कि अधिनियम की उप-धारा (4) के दायरे और सीमा को उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान में नहीं रखा गया है। अधिनियम की धारा 11 (2) के संदर्भ में दायर अपील में, अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय, जैसा भी मामला हो, को धारा 3 या धारा 4 के तहत दिए गए आदेश को रद्द करने और उसके बदले विधि के अनुसार सजा देने का अधिकार क्षेत्र है। अपराध की प्रकृति में परिवर्तन की कोई गुंजाइश नहीं थी। इसके अतिरिक्त, यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि वास्तविक शिकायतकर्ता को धारा 11 की उप-धारा (2) के तहत अपील दायर करने का कोई अधिकार नहीं है। कलकत्ता की डिवीजन बेंच के निर्णय पर मजबूत निर्भरता रखी गई। परमाल घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, [1984] सीआर.एल जे. 1302 (शिकायतकर्ता) प्रार्थी संख्या 1 की ओर से कोई उपस्थिति नहीं थी।

राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अधिनियम की धारा 11 (4) के तहत पारित निर्णय के दायरे के संबंध में अपीलकर्ताओं के रुख का समर्थन किया।

इसमें शामिल मुद्दे की विवेचना करने के लिए अब तक प्रासंगिक धारा 11 को उद्धृत करना उचित होगा। प्रावधान इस प्रकार हैं:

"11. अधिनियम के तहत आदेश देने के लिए सक्षम न्यायालय अपील और पुनरीक्षण और अपील और पुनरीक्षण में न्यायालयों की शक्तियाँ-

(1) संहिता या किसी अन्य कानून में निहित किसी भी बात के होने के बावजूद, इस अधिनियम के तहत आदेश किसी भी न्यायालय द्वारा दिया जा सकता है जो अपराधी पर मुकदमा चलाने और कारावास की सजा देने के लिए सशक्त है और उच्च न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय द्वारा भी जब मामला उसके सामने अपील या पुनरीक्षण में आता है।

(2) संहिता में किसी भी बात के होते हुये भी, जहां एक धारा 3 या धारा 4 के तहत कोई आदेश अपराधी पर मुकदमा चलाने वाले किसी न्यायालय (उच्च न्यायालय के अलावा) द्वारा दिया जाता है, अपील उस न्यायालय में की जायेगी, जहां आमतौर पर पूर्व के न्यायालय की सजा के खिलाफ अपील की जाती है।

(3) किसी भी मामले में जहां 21 वर्ष के कम उम्र के किसी भी व्यक्ति को अपराध करने का दोषी पाया जाता है और जिस न्यायालय द्वारा उसे दोषी पाया जाता है, वह धारा 3 या धारा 4 के तहत उसके संबंध में कार्यवाही करने से इनकार कर देता है और उसके खिलाफ कोई सजा सुनाता है जो जुर्माने के साथ या उसके बिना जिसमें कोई अपील नहीं की जाती है या अपील किया जाना पसंद नहीं किया जाता है, तब संहिता या किसी अन्य विधि में निहित किसी भी बात होने के बावजूद, जिस न्यायालय में अपील आमतौर पर पूर्व न्यायालय के आदेशों के विरुद्ध से होती है, वह या तो वह अपने स्वयं के प्रस्ताव पर या उसके आधार पर अपील कर सकता है। दोषी व्यक्ति या परिवीक्षा अधिकारी द्वारा ऐसे दिये गये आवेदन पर, प्रकरण के रिकॉर्ड की मांग की जायेगी और उसकी जांच की जायेगी और उस पर ऐसा आदेश पारित किया जायेगा जो वह उचित समझे।

(4) किसी अपराध के संबंध में धारा 3 या धारा 4 के तहत कोई आदेश दिया गया है, तो अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय अपनी पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुये ऐसे आदेश को रद्द कर सकता है और इसके बदले में विधि अनुसार ऐसे अपराधी को सजा दे सकता है।

बशर्ते कि अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय पुनरीक्षण में उससे अधिक सजा नहीं देगा, जो उस न्यायालय द्वारा दी जा सकती थी, जिसके द्वारा अपराधी को दोषी पाया गया हो।

पहला सवाल यह है कि क्या वास्तविक शिकायतकर्ता धारा 11 की उप-धारा (2) के तहत अपील कर सकता है प्रावधान केवल उस फॉर्म की बात करता है जिसमें ऐसी अपील को डिकोड किया जाना है। यह विशेष रूप से प्रावधान नहीं करता कि कौन कौन अपील कर सकते हैं। शिकायतकर्ता की अपील की विचारणीयता के संबंध में मतभेद है। उड़ीसा और पटना उच्च न्यायालयों ने अभिनिर्धारित किया है कि वास्तविक शिकायतकर्ता के अनुरोध पर यह विचारणीय था। (राजकिशोर जेना बनाम राजा, उर्फ कलसी साहू और अन्य ए.आइ.आर (1971) उड़ीसा 193 और बैद्यनाथ प्रसाद बनाम अवधेश सिंह और अन्य, ए.आइ.आर(1964) पटना 358। पटना उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि शिकायतकर्ता दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (संहिता) के तहत बरी करने के आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण दायर कर सकता है। नतीजन, यह देखा गया कि शिकायतकर्ता को दोषसिद्धि और सजा में रुचि है। उड़ीसा उच्च न्यायालय ने शिकायतकर्ता द्वारा दायर पुनरीक्षण याचिका को यह कहते हुये खारिज कर दिया कि उसे अधिनियम की धारा 11 (2) के तहत सत्र न्यायालय में अपील करने का अधिकार है। परमल घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (1984) सीआरएल एल. जे.

1302 में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया है और माना है कि राज्य को सजा सुनाए जाने के समय सुनवाई का अधिकार है, लेकिन शिकायतकर्ता को नहीं। राज्य सरकार की भूमिका यह सुनिश्चित करना है कि अभियुक्त व्यक्ति को किए गए अपराध के लिए दंडित किया जाए और पर्याप्त सजा दी जाए। यदि राज्य का यह मानना है कि सजा अपर्याप्त है तो वह संहिता में दिए गए प्रावधान के अनुसार उच्च न्यायालय का रुख कर सकता है।

धारा 11 (2) की भाषा उस व्यक्ति के बारे में अप्रतिबंधित है जो अपील कर सकता है। इसलिए, अधिकार को केवल दोषी व्यक्ति के साथ या यहाँ तक कि राज्य तक ही सीमित रखने का कोई औचित्य नहीं है। इस मुद्दे को दूसरे दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। पुनरीक्षण अधिकारिता के तहत उच्च न्यायालय किसी उपयुक्त मामले में पुनः सुनवाई का निर्देश दे सकता है, हालांकि वह दोषमुक्त करने के आदेश को दोषसिद्ध के आदेश में परिवर्तित नहीं कर सकता। जब निजी पक्ष के अनुरोध पर दोषमुक्त करने के आदेश के खिलाफ न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदन की अनुमति दी जाती है, तो उच्च न्यायालय विधि में अपील को रिमांड करने के लिए बाध्य है। लेकिन अन्य सभी परिस्थितियों में उच्च न्यायालय वैसा ही आदेश को पारित करने के लिए सक्षम है जैसा अपील न्यायालय द्वारा पारित किया जा सकता है।

यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि धारा 11 की उप-धारा (2) "संहिता में निहित किसी भी बात के बावजूद" अभिव्यक्ति से शुरू होती है और अपरिपूर्ण शब्दों में प्रदान करती है कि "न्यायालय में एक अपील की जायेगी"। संहिता के तहत अपील की कार्यवाही केवल दोषमुक्ति या दोषसिद्धि के आदेशों से संबंधित है। जबकि अधिनियम की धारा 11 (2) के प्रावधान दोषसिद्धि या दोषमुक्ति होने के तथ्य से कुछ अलग से संबंधित

हैं। अधिनियम की धारा 11 (2) के तहत अपील दोषमुक्ति या दोषसिद्धि के खिलाफ नहीं है, बल्कि अधिनियम की धारा 3 या धारा 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य के खिलाफ है। विधायिका का आशय स्पष्ट रूप से अभियोजन पक्ष और अभियुक्त दोनों को ऐसा अधिकार प्रदान करना है। विधायिका द्वारा शिकायतकर्ता के हितों की अनदेखी नहीं की गई है। वैधानिक रूप से यह प्रावधान किया गया है कि शिकायतकर्ता द्वारा दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन दायर किया जा सकता है। ऐसा होने पर, शिकायतकर्ता अधिनियम की धारा 3 या 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर सवाल उठाते हुए अधिनियम की धारा 11 (2) के तहत अपील कर सकता है। पटना और उड़ीसा उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त किया गया दृष्टिकोण सही है और कलकत्ता उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सही नहीं है। इसलिए उक्त दृष्टिकोण अमान्य है।

यह हमें अधिनियम की धारा 11 (2) के तहत अपील में हस्तक्षेप के दायरे और सीमा के महत्वपूर्ण मुद्दे पर लाता है। धारा 11 (4) स्थिति को स्पष्ट करती है कि अपराधियों के संबंध में केवल धारा 3 या धारा 4 के तहत पारित आदेश के औचित्य पर अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा, जैसा भी मामला हो, निस्तारण किया जा सकता है। अपीलीय न्यायालय या उच्च न्यायालय पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करते हुये ऐसे आदेश को रद्द कर सकता है, जिसका तात्पर्य धारा 3 या 4 के तहत पारित किये जाने से है और इसके बदले में ऐसे व्यक्तियों को सजा दे सकता है। जाहिर है, सजा केवल उस अपराध के संबंध में दी जा सकती है जिसके संबंध में धारा 3 या धारा 4 के तहत आदेश दिया गया है। जिस अपराध से संबंधित अधिनियम के तहत आदेश पारित किया गया है। अपराध की प्रकृति को बदलने और यह निर्देश देने की कोई गुंजाइश नहीं है कि अभियुक्त को किसी अन्य अपराध के लिए दोषी ठहराया

जाए। इसलिए, उच्च न्यायालय का यह निर्देश देना उचित नहीं था कि अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 326 के तहत होगी। हम यह पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने अधिनियम की धारा 4 के तहत आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त कारण दिए थे। ऐसा होने के कारण, अधिनियम के तहत विचारण न्यायालय द्वारा दिये गये लाभ में उच्च न्यायालय का हस्तक्षेप करना उचित नहीं था।

उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया जाता है और विचारण न्यायालय के फैसले को बहाल किया जाता है।

अपील की अनुमति है।

वी. एस. एस.

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डॉ. सरोज सीवर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।